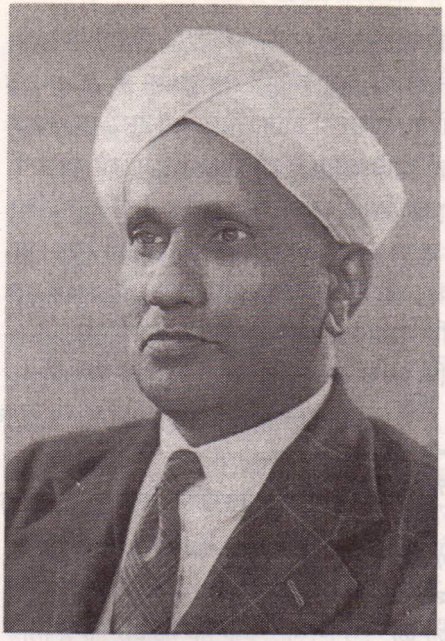

वैज्ञानिक नज़रिया

डॉ. सी.वी. रामन

यह आलेख सर सी.वी. रामन द्वारा 1951 में दिए गए व्याख्यान पर आधारित है। यह 'द न्यू फिजिक्स टॉक्स ऑन आस्पेक्ट्स ऑफ साइन्स' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुआ था।

विज्ञान की सभी शाखाओं में यह आम बात है कि तथ्यों व खोजों को उन व्यक्तियों के नाम से जाना जाता है जिन्होंने उनकी खोज करके विषय की बुनियाद बनाने में योगदान दिया। यह परिपाटी काफी उपयोगी लगती है क्योंकि इससे विज्ञान की शब्दावली को संक्षिप्त व सटीक बनाने में मदद मिलती है। इससे विज्ञान के अग्रणी व्यक्तियों का सम्मान भी होता है। आखिर उन्होंने उस विषय को निर्मित करने में अपना योगदान दिया है। दरअसल विज्ञान के विद्यार्थी का परिचय विषय के अग्रणी व्यक्तियों से इसी रूप में होता है। इससे विज्ञान के अध्ययन में एक मानवीय रुचि का भी आभास मिलता है। यह कम महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि इससे पता चलता है कि विज्ञान की वास्तविक प्रकृति मानवीय आत्मा का जीवन्त व सतत सृजन है।

विज्ञान के विभिन्न विषयों के इतिहास और उन विषयों के विकास में योगदान देने वाले वैज्ञानिकों की जीवनियों का अध्ययन विज्ञान के वास्तविक अर्थ व मर्म को समझने के लिए अनिवार्य है। विज्ञान की अच्छी से अच्छी औपचारिक पुस्तक की अपेक्षा ये कहीं अधिक स्फूर्तिदायक होते हैं। शिक्षक के लिए तो यह इतिहास और जीवनियां अनमोल हैं। जब भी उसे लगे कि उसके छात्रों का ध्यान भटक रहा है, तो वह अपनी कक्षा में जान डालने के लिए यह चर्चा छेड़ सकता है कि कोई खोज कैसे हुई थी या उस विषय से जुड़े किसी महान वैज्ञानिक के बारे में कोई घटना सुना सकता है। इस तरह से शिक्षक अपने छात्रों को यह आभास दे सकता है कि विज्ञान कैसे बनता है और उस बौद्धिक दृष्टिकोण से परिचित करा सकता है जो विज्ञान के मूल में है।

वैज्ञानिक खोज से आशय क्या है? वैज्ञानिक खोज होती कैसे हैं? ये सतत दिलचस्पी के सवाल हैं और बार-बार पूछे जाते हैं और इनके जवाब भी उतने ही विविधतापूर्ण होते हैं। ज़ाहिर है, खोज किसी नए तथ्य या विचार की हो सकती है। अलबत्ता यह भी स्पष्ट है कि बगैर व्याख्या के अवलोकन का विज्ञान में ज़्यादा महत्व नहीं होता। इसी प्रकार से तथ्यों के प्रमाण के बगैर विचारों का भी कोई खास महत्व नहीं है। अर्थात एक वैज्ञानिक खोज महत्वपूर्ण तब होती है जब उसमें प्रायोगिक व सैद्धांतिक दोनों अंश हों। यह संदर्भ विशेष पर निर्भर है। इस आधार पर प्रायोगिक खोज और सैद्धान्तिक खोज के बीच मोटा-मोटा अंतर किया जा सकता है। मसलन, रांट्जन द्वारा एक्स किरणों की खोज स्पष्टतः एक प्रायोगिक खोज थी जबकि प्लांक द्वारा क्वांटम की खोज मूलतः सैद्धांतिक थी। स्पष्ट है कि इन दो तरह की खोजों में खोज का तौर-तरीका और खोजकर्ता का रवैया दोनों काफी भिन्न होते हैं। प्रयोगकर्ता और सिद्धांतकार के रवैये के बीच अंतर गणितीय विज्ञान

के मामले में साफ नज़र आते हैं। यह अंतर उन विज्ञानों में थोड़ा धुंधला होता है जो मूलतः अनुभवों की बुनियाद पर खड़े हैं और जिनमें तथ्यों के अवलोकन व उन अवलोकनों के बारे में सोचने को एकदम अलग-अलग नहीं किया जा सकता।

खोज शब्द से एक नाटकीय और रोमांचक घटना का संकेत मिलता है। जैसे किसी जुते हुए खेत में पचास कैरेट का हीरा मिल जाना। वास्तव में, विज्ञान का इतिहास ऐसी नाटकीय खोजों से भरपूर है। यह नाटकीयता और रोमांच खोज करने वाले वैज्ञानिक के व्यवहार में साफ झलकते हैं। वैज्ञानिकों के जीवन के ऐसे कई किस्से सुनाए जा सकते हैं। सबसे दिलचस्प किस्सा तो आर्किमिडीज़ का है जिसके दिमाग में हायड्रोस्टेटिक्स का सिद्धांत कौंधते ही वह नंगा ही यूरेका, यूरेका चीखते हुए हमाम से निकल पड़ा था। कहानी का सार यह है कि नए विचार के महत्व को पहचानकर भावनाओं का एक ज्वार उठा था। ऐसे क्षण पर महसूस किया गया आनंद और संतोष वर्णनातीत है। ऐसे नाटकीय क्षण तो बड़े-बड़े वैज्ञानिकों के जीवन में एकाध बार ही आते हैं। ज्ञान की साधना में व्यतीत जीवन में ये क्षण ही सबसे बड़ा पुरस्कार होते हैं।

इस विचार का कोई अर्थ नहीं है कि वैज्ञानिक खोज संयोग से हो गई क्योंकि यदि यह संयोग हो, तो भी यह हर किसी के साथ नहीं होता। जो टिप्पणीकार खोजों को मात्र संयोग बताते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि वैज्ञानिक खोज का सबसे अहम हिस्सा यह होता है कि प्रेक्षक उसके महत्व को, उसकी वास्तविक प्रकृति को पहचान पाए। यह तभी संभव है जब उस व्यक्ति के पास पर्याप्त क्षमता हो और अपने विषय का समुचित ज्ञान हो।

छोटी-मोटी खोजें अधिक होती हैं। और ये खोजकर्ता को संतोष प्रदान करती हैं, आगे बढ़ने का उत्साह देती हैं। मगर इनमें वैसा ड्रामा नहीं होता।

यहां यह ज़िक्र करना ज़रूरी है कि बड़ी-बड़ी खोजों को भी शुरुआत में सदा सम्मान और प्रशंसा हासिल नहीं होती। आम तौर पर नादान या ईर्ष्यालु लोग किसी की उपलब्धि का महत्व कम करके दिखाने के लिए कहेंगे कि वह तो संयोगवश हो गई या भाग्य के चलते हुई, गोया कोई लॉटरी हो। ऐसी टिप्पणियां निंदनीय और निरर्थक हैं। इस विचार का कोई अर्थ नहीं है कि वैज्ञानिक खोज संयोग से हो गई क्योंकि यदि यह संयोग हो, तो भी यह हर किसी के साथ नहीं होता। विज्ञान में सुखी खोजकर्ता सदैव ऐसा व्यक्ति होता है जो ज्ञान व सत्य की खोज में जुटा हो और अपने श्रम में इस उम्मीद से प्रेरित हो कि वह कम से कम सत्य का एक दाना तो पा ही लेगा। जो टिप्पणीकार खोजों को मात्र संयोग बताते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि वैज्ञानिक खोज का सबसे अहम हिस्सा यह होता है कि प्रेक्षक उसके महत्व को, उसकी वास्तविक प्रकृति को पहचान पाए। यह तभी संभव है जब उस व्यक्ति के पास पर्याप्त क्षमता हो और अपने विषय का समुचित ज्ञान हो। प्रायः वैज्ञानिक खोज़ें एक सोची-समझी कार्य योजना का नतीजा होती हैं। ये ज्ञान की किसी शाखा में महीनों या बरसों के व्यवस्थित अध्ययन के बाद आती हैं। यदि यह सही है कि दुनिया सर्वथा प्रायोगिक तथ्यों के महत्व को मानने में समय लेती है, तो यह कोई अचरज की बात नहीं होनी चाहिए कि नए सैद्धांतिक विचारों को स्वीकारने और सराहने में उसे और ज़्यादा समय लगता है। आम तौर पर ऐसे नए विचारों को उदासीनता या शंका से देखा जाता है। बरसों की वकालत और तथ्यों के ज़ोरदार समर्थन के बाद ही खोजकर्ता यह उम्मीद कर सकता है कि नया विचार मान्य होगा। इस संदर्भ में अक्सर अर्हीनियस का किस्सा सुनाया जाता है। अर्हीनियस ने विलयनों की प्रकृति पर अपने नए विचारों के आधार पर शोध प्रबंध स्टॉकहोम विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया था। उन्होंने अपने विचार के समर्थन में काफी प्रायोगिक आंकड़े भी दिए थे। इस युगांतरकारी शोध प्रबंध के बदले में उन्हें मिली थी एक चतुर्थ श्रेणी की उपाधि जिसकी वजह से वे किसी भी अकादमिक कैरियर के लिए अपात्र घोषित हो गए। अलबत्ता, अर्हीनियस इस

अनुभव से उबरे और बाद में नोबल पुरस्कार से नवाजे गए तथा देश के महानतम वैज्ञानिक कहलाए। मगर ऐसे कई उदाहरण हैं जब युवा प्रतिभा का दमन हुआ और उसे खामोश कर दिया गया।

विज्ञान के इतिहास में जो एक बात स्पष्ट नज़र आती है, वह यह है कि महान खोजों और युवा प्रतिभाओं का एक अटूट सम्बंध है। दरअसल, यदि हम विज्ञान की किसी भी शाखा का इतिहास लिखें और उसमें से युवा शोधकर्ताओं के योगदान को छोड़ दें, तो लिखने को कुछ खास बचेगा नहीं। लगता यह है कि यदि बाकी बातें समान हों, तो वैज्ञानिक शोध में सफलता के लिए उम्र व अनुभव से उपजी ज्ञान की परिपक्वता ही नहीं बल्कि दृष्टिकोण में ताज़गी की ज़रूरत होती है जो युवाओं का कुदरती गुण है। यानी उम्र के साथ जो अनुदारता पैदा होती है वह विज्ञान में महान उपलब्धियों के मार्ग में रोड़ा बन जाती है। महान विचार सहजता से युवा दिमागों में आते हैं। मगर चूंकि नए विचारों को पूरी तरह व समुचित रूप से विकसित करने में काफी समय लगता है, इसलिए विज्ञान में उम्र और अनुभव बिल्कुल बेकार की चीज़ें भी नहीं हैं। कुछ हद तक तो उम्र के साथ पनपी अनुदारता उपयोगी भी होती है। क्योंकि यह युवा कल्पना की उच्छृंखल उड़ानों पर एक ब्रेक का भी काम करती है।

इसके अलावा यदि बुजुर्ग लोग चाहें, तो अपना युवा जोश और नज़रिया बनाए रख सकते हैं। अर्थात यदि वे अपनी उम्र जनित संकीर्णता का उपयोग युवा जीनियस को दबाने में न करें, तो बुजुर्ग लोग अनुसंधान में मार्गदर्शन व प्रेरणा की उपयोगी भूमिका निभा सकते हैं। इस तरह से देखें, तो वैज्ञानिकों की बुजुर्ग पीढ़ी का प्रमुख काम युवा पीढ़ी में प्रतिभा व जीनियस की खोज करना और उसे उन्मुक्त अभिव्यक्ति व फैलाव के अवसर प्रदान करना है।

विज्ञान के इतिहास में जो एक बात स्पष्ट नज़र आती है, वह यह है कि महान खोजों और युवा प्रतिभाओं का एक अटूट सम्बंध है। दरअसल, यदि हम विज्ञान की किसी भी शाखा का इतिहास लिखें और उसमें से युवा शोधकर्ताओं के योगदान को छोड़ दें, तो लिखने को कुछ खास बचेगा नहीं। यदि बुजुर्ग लोग अपनी उम्र जनित संकीर्णता का उपयोग युवा जीनियस को दबाने में न करें, तो वे अनुसंधान में मार्गदर्शन व प्रेरणा की उपयोगी भूमिका निभा सकते हैं। बुजुर्ग पीढ़ी का प्रमुख काम युवा पीढ़ी में प्रतिभा व जीनियस की खोज करना और उसे उन्मुक्त अभिव्यक्ति व फैलाव के अवसर प्रदान करना है।

अब तक मैंने इस बारे में कुछ नहीं कहा कि वह कौन-सी प्रेरणा होती है जो कुछ लोगों को अपना जीवन विज्ञान के प्रति समर्पित करने को उकसाती है। यह इस व्यापक प्रश्न का हिस्सा ही है कि वह क्या चीज़ है जो लोगों को किसी भी तरह की आदर्शवादी गतिविधि करने को प्रेरित करती है? मेरे ख्याल से यह तो आसानी से माना जा सकता है कि विज्ञान की साधना की प्रेरक शक्ति मूलतः एक सृजनात्मक आग्रह से पैदा होती है। चित्रकार, मूर्तिकार, वास्तुविद और कवि सब अपने-अपने ढंग से प्रकृति से प्रेरणा प्राप्त करते हैं और उसे अपने पसंदीदा माध्मय के ज़रिए प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। यह माध्मय रंग या संगमरमर, पत्थर या लफ्ज़ कुछ भी हो सकता है। विज्ञान के लोग भी प्रकृति के छात्र हैं और उसी से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। वैज्ञानिक अपने विचारों के माध्यम से प्रकृति का एक चित्र अपने मस्तिष्क में बनाता है। वह प्रकृति की अनंत जटिलताओं को चन्द सिद्धांतों व क्रिया के तत्वों के रूप में प्रस्तुत करता है जिन्हें वह प्रकृति के नियम कहता है। ऐसा करते हुए, कला के अन्य स्वरूपों के अध्येताओं की ही तरह, वह अपने आपको एक कठोर अनुशासन के अधीन रखता है। इस अनुशासन के नियम उसने स्वयं ही बनाए हैं और इन्हें वह तर्क कहता है। विज्ञान प्रकृति का जो भी चित्र प्रस्तुत करे उसमें इन नियमों का पालन होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, वह चित्र सुसंगत होना चाहिए। बौद्धिक सौंदर्य वाकई सौंदर्य की सर्वोत्तम किस्म है। दूसरे शब्दों में, विज्ञान प्रकृति के प्रस्तुतीकरण में इंसान के सौंदर्यबोध और बौद्धिक कर्म का सुंदर संगम है। इसीलिए यह सृजनात्मक कला का सर्वोच्च स्वरूप है। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***